International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 1 Issue 1 || December. 2011 || PP. 28-33

प्रेमचंद और प्रसाद

ताहिरा बानों

व्याख्याता उर्दू

राजकीय मीरा कन्या महाविधालय उदयपुर (राजस्थान)

परिचय

जयशंकर प्रसाद , जन्म: 30 जनवरी, 1889, वाराणसी, उत्तर प्रदेश - मृत्यु: 15 नवम्बर, 1937) हिन्दी नाट्य जगत और कथा साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रखते हैं। कथा साहित्य के क्षेत्र में भी उनकी देन महत्त्वपूर्ण है। भावना-प्रधान कहानी लिखने वालों में जयशंकर प्रसाद अनुपम थे।

जिस समय खड़ी बोली और आधुनिक हिन्दी साहित्य किशोरावस्था में पदार्पण कर रहे थे उस समय जयशंकर प्रसाद का जन्म सन् 1889 ई. (माघ शुक्ल दशमी, संवत् 1946 वि.) वाराणसी, उत्तर प्रदेश में हुआ था। कवि के पितामह शिव रत्न साहु वाराणसी के अत्यन्त प्रतिष्ठित नागरिक थे और एक विशेष प्रकार की सुरती (तम्बाकू) बनाने के कारण 'सुँघनी साहु' के नाम से विख्यात थे। उनकी दानशीलता सर्वविदित थी और उनके यहाँ विद्वानों कलाकारों का समादर होता था। जयशंकर प्रसाद के पिता देवीप्रसाद साहु ने भी अपने पूर्वजों की परम्परा का पालन किया। इस परिवार की गणना वाराणसी के अतिशय समृद्ध घरानों में थी और धन-वैभव का कोई अभाव न था। जयशंकर प्रसाद की शिक्षा घर पर ही आरम्भ हुई। संस्कृत, हिन्दी, फ़ारसी, उर्दू के लिए शिक्षक नियुक्त थे। इनमें रसमय सिद्ध प्रमुख थे। प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों के लिए दीनबन्धु ब्रह्मचारी शिक्षक थे। प्रसाद की बारह वर्ष की अवस्था थी, तभी उनके पिता का देहान्त हो गया। इसी के बाद परिवार में गृहक्लेश आरम्भ हुआ और पैतृक व्यवसाय को इतनी क्षति पहुँची कि वही 'सुँघनीसाहु का परिवार, जो वैभव में लोटता था, ऋण के भार से दब गया। पिता की मृत्यु के दो-तीन वर्षों के भीतर ही प्रसाद की माता का भी देहान्त हो गया और सबसे दुर्भाग्य का दिन वह आया, जब उनके ज्येष्ठ भ्राता शम्भूरतन चल बसे तथा सतह वर्ष की अवस्था में ही प्रसाद को एक भारी उत्तरदायित्व सम्भालना पड़ा। प्रसाद का अधिकांश जीवन वाराणसी में ही बीता था।

प्रसाद जी का जीवन कुल 48 वर्ष का रहा है। इसी में उनकी रचना प्रक्रिया इसी विभिन्न साहित्यिक विधाओं में प्रतिफलित हुई कि कभी-कभी आश्चर्य होता है। कविता, उपन्यास, नाटक और निबन्ध सभी में उनकी गति समान है। किन्तु अपनी हर विद्या में उनका कवि सर्वत्र मुखरित है। वस्तुतः एक कवि की गहरी कल्पनाशीलता ने ही साहित्य को अन्य विधाओं में उन्हें विशिष्ट और व्यक्तिगत प्रयोग करने के लिये अनुप्रेरित किया। उनकी कहानियों का अपना पृथक और सर्वथा मौलिक शिल्प है, उनके चरित्र-चित्रण का, भाषा-सौष्ठव का, वाक्यगठन का एक सर्वथा निजी प्रतिष्ठान है। उनके नाटकों में भी इसी प्रकार के अभिनव और श्लाघ्य प्रयोग मिलते हैं। अभिनेयता को दृष्टि में रखकर उनकी बहुत आलोचना की गई तो उन्होंने एक बार कहा भी था कि रंगमंच नाटक के अनुकूल होना चाहिये न कि नाटक रंगमंच के अनुकूल। उनका यह कथन ही नाटक रचना के आन्तरिक विधान को अधिक महत्त्वपूर्ण सिद्व कर देता है।

कहा जाता है कि नौ वर्ष की अवस्था में ही जयशंकर प्रसाद ने 'कलाधर' उपनाम से ब्रजभाषा में एक सवैया लिखकर अपने गुरु रसमयसिद्ध को दिखाया था। उनकी आरम्भिक रचनाएँ यद्यपि ब्रजभाषा में मिलती हैं। पर क्रमश: वे खड़ी बोली को अपनाते गये और इस समय उनकी ब्रजभाषा की जो रचनाएँ उपलब्ध हैं, उनका महत्त्व केवल ऐतिहासिक ही है। कालक्रम के अनुसार 'चित्राधार' प्रसाद का प्रथम संग्रह है, इसका प्रथम संस्करण 1918 ई. में हुआ। इसमें कविता, कहानी, नाटक, निबन्ध सभी का संकलन था और भाषा ब्रज तथा खड़ी बोली दोनों थी। लगभग दस वर्ष के बाद 1928 में जब इसका दूसरा संस्करण आया, तब इसमें ब्रजभाषा की रचनाएँ ही रखी गयीं। साथ ही इसमें प्रसाद की आरम्भिक कथाएँ भी संकलित हैं। 'चित्राधार' की कविताओं को दो प्रमुख भागों में विभक्त किया जा सकता है। एक खण्ड उन आख्यानक कविताओं अथवा कथा काव्यों का है, जिनमें प्रबन्धात्मकता है। अयोध्या का उद्धार, वनमिलन, और प्रेमराज्य तीन कथाकाव्य इसमें संगृहीत हैं। 'अयोध्या का उद्धार' में लव द्वारा अयोध्या को पुन: बसाने की कथा है। इसकी प्रेरणा कालिदास का 'रघुवंश' है। 'वनमिलन' में 'अभिज्ञानशाकुन्तलम' की प्रेरणा है। 'प्रेमराज्य' की कथा ऐतिहासिक है। 'चित्रधार' की स्फुट रचनाएँ प्रकृतिविषयक तथा भक्ति और प्रेमसम्बन्धिनी है। 'कानन कुसुम' प्रसाद की खड़ीबोली की कविताओं का प्रथम संग्रह है। जयशंकर प्रसाद ने हिंदी काव्य में छायावाद की स्थापना की जिसके द्वारा खड़ी बोली के काव्य में कमनीय माधुर्य की रससिद्ध धारा प्रवाहित हुई और वह काव्य की सिद्ध भाषा बन गई। वे छायावाद के प्रतिष्ठापक ही नहीं अपितु छायावादी पद्धति पर सरस संगीतमय गीतों के लिखनेवाले श्रेष्ठ कवि भी बने। काव्यक्षेत्र में प्रसाद की कीर्ति का मूलाधार 'कामायनी' है। खड़ी बोली का यह अद्वितीय महाकाव्य मनु और श्रद्धा को आधार बनाकर रचित मानवता को विजयिनी बनाने का संदेश देता है। यह रूपक कथाकाव्य भी है जिसमें मन, श्रद्धा और इड़ा (बुद्धि) के योग से अखंड आनंद की उपलब्धि का रूपक प्रत्यभिज्ञा दर्शन के आधार पर संयोजित किया गया है। उनकी यह कृति छायावाद ओर खड़ी बोली की काव्यगरिमा का ज्वलंत उदाहरण है। सुमित्रानन्दन पंत इसे 'हिंदी में ताजमहल के समान' मानते हैं। शिल्पविधि, भाषासौष्ठव एवं भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से इसकी तुलना खड़ी बोली के किसी भी काव्य से नहीं की जा सकती है। जयशंकर प्रसाद ने अपने दौर के पारसी रंगमंच की परंपरा को अस्वीकारते हुए भारत के गौरवमय अतीत के अनमोल चरित्रों को सामने लाते हुए अविस्मरनीय नाटकों की रचना की।

जयशंकर प्रसाद जी का देहान्त 15 नवम्बर, सन् 1937 ई. में हो गया। प्रसाद जी भारत के उन्नत अतीत का जीवित वातावरण प्रस्तुत करने में सिद्धहस्त थे। उनकी कितनी ही कहानियाँ ऐसी हैं जिनमें आदि से अंत तक भारतीय संस्कृति एवं आदर्शों की रक्षा का सफल प्रयास किया गया है।

साहित्यकार : मुंशी प्रेमचंद

परिचय

मुंशी प्रेमचंद , जन्म: 31 जुलाई, 1880 - मृत्यु: 8 अक्टूबर, 1936) भारत के उपन्यास सम्राट माने जाते हैं जिनके युग का विस्तार सन् 1880 से 1936 तक है। यह कालखण्ड भारत के इतिहास में बहुत महत्त्व का है। इस युग में भारत का स्वतंत्रता-संग्राम नई मंज़िलों से गुज़रा। प्रेमचंद का वास्तविक नाम धनपत राय श्रीवास्तव था। वे एक सफल लेखक, देशभक्त नागरिक, कुशल वक्ता, ज़िम्मेदार संपादक और संवेदनशील रचनाकार थे। बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध में जब हिन्दी में काम करने की तकनीकी सुविधाएँ नहीं थीं फिर भी इतना काम करने वाला लेखक उनके सिवा कोई दूसरा नहीं हुआ। प्रेमचंद का जन्म वाराणसी से लगभग चार मील दूर, लमही नाम के गाँव में 31 जुलाई, 1880 को हुआ। प्रेमचंद के पिताजी मुंशी अजायब लाल और माता आनन्दी देवी थीं। प्रेमचंद का बचपन गाँव में बीता था। वे नटखट और खिलाड़ी बालक थे और खेतों से शाक-सब्ज़ी और पेड़ों से फल चुराने में दक्ष थे। उन्हें मिठाई का बड़ा शौक़ था और विशेष रूप से गुड़ से उन्हें बहुत प्रेम था। बचपन में उनकी शिक्षा-दीक्षा लमही में हुई और एक मौलवी साहब से उन्होंने उर्दू और फ़ारसी पढ़ना सीखा। एक रुपया चुराने पर 'बचपन' में उन पर बुरी तरह मार पड़ी थी। उनकी कहानी, 'कज़ाकी', उनकी अपनी बाल-स्मृतियों पर आधारित है। कज़ाकी डाक-विभाग का हरकारा था और बड़ी लम्बी-लम्बी यात्राएँ करता था। प्रेमचंद का कुल दरिद्र कायस्थों का था, जिनके पास क़रीब छः बीघे ज़मीन थी और जिनका परिवार बड़ा था। प्रेमचंद के पितामह, मुंशी गुरुसहाय लाल, पटवारी थे। उनके पिता, मुंशी अजायब लाल, डाकमुंशी थे और उनका वेतन लगभग पच्चीस रुपये मासिक था। उनकी माँ, आनन्द देवी, सुन्दर सुशील और सुघड़ महिला थीं। छः महीने की बीमारी के बाद प्रेमचंद की माँ की मृत्यु हो गई। तब वे आठवीं कक्षा में पढ़ रहे थे। दो वर्ष के बाद उनके पिता ने फिर विवाह कर लिया और उनके जीवन में विमाता का अवतरण हुआ। प्रेमचंद के इतिहास में विमाता के अनेक वर्णन हैं। ग़रीबी से लड़ते हुए प्रेमचन्द ने अपनी पढ़ाई मैट्रिक तक पहुँचाई। जीवन के आरंभ में ही इनको गाँव से दूर वाराणसी पढ़ने के लिए नंगे पाँव जाना पड़ता था। इसी बीच में इनके पिता का देहान्त हो गया। प्रेमचन्द को पढ़ने का शौक़ था, आगे चलकर यह वकील बनना चाहते थे, मगर ग़रीबी ने इन्हें तोड़ दिया। प्रेमचंद उनका साहित्यिक नाम था और बहुत वर्षों बाद उन्होंने यह नाम अपनाया था। उनका वास्तविक नाम 'धनपत राय' था। जब उन्होंने सरकारी सेवा करते हुए कहानी लिखना आरम्भ किया, तब उन्होंने नवाब राय नाम अपनाया। बहुत से मित्र उन्हें जीवन-पर्यन्त नवाब के नाम से ही सम्बोधित करते रहे। जब सरकार ने उनका पहला कहानी-संग्रह, 'सोज़े वतन' ज़ब्त किया, तब उन्हें नवाब राय नाम छोड़ना पड़ा।

बाद का उनका अधिकतर साहित्य प्रेमचंद के नाम से प्रकाशित हुआ। इसी काल में प्रेमचंद ने कथा-साहित्य बड़े मनोयोग से पढ़ना शुरू किया। एक तम्बाकू-विक्रेता की दुकान में उन्होंने कहानियों के अक्षय भण्डार, 'तिलिस्मे होशरूबा' का पाठ सुना। इस पौराणिक गाथा के लेखक फ़ैज़ी बताए जाते हैं, जिन्होंने अकबर के मनोरंजन के लिए ये कथाएं लिखी थीं। एक पूरे वर्ष प्रेमचंद ये कहानियाँ सुनते रहे और इन्हें सुनकर उनकी कल्पना को बड़ी उत्तेजना मिली। कथा साहित्य की अन्य अमूल्य कृतियाँ भी प्रेमचंद ने पढ़ीं। प्रेमचन्द की रचना-दृष्टि, विभिन्न साहित्य रूपों में, अभिव्यक्त हुई। वह बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार थे। प्रेमचंद की रचनाओं में तत्कालीन इतिहास बोलता है। उन्होंने अपनी रचनाओं में जन साधारण की

भावनाओं, परिस्थितियों और उनकी समस्याओं का मार्मिक चित्रण किया। उनकी कृतियाँ भारत के सर्वाधिक विशाल और विस्तृत वर्ग की कृतियाँ हैं। अपनी कहानियों से प्रेमचंद मानव-स्वभाव की आधारभूत महत्ता पर बल देते हैं। 'बड़े घर की बेटी,' आनन्दी, अपने देवर से अप्रसन्न हुई, क्योंकि वह गंवार उससे कर्कशता से बोलता है और उस पर खींचकर खड़ाऊँ फेंकता है। जब उसे अनुभव होता है कि उनका परिवार टूट रहा है और उसका देवर परिताप से भरा है, तब वह उसे क्षमा कर देती है और अपने पति को शांत करती है। इसी प्रकार 'नमक का दारोग़ा' बहुत ईमानदार व्यक्ति है। घूस देकर उसे बिगाड़ने में सभी असमर्थ हैं। सरकार उसे, सख्ती से उचित कार्रवाई करने के कारण, नौकरी से बर्ख़ास्त कर देती है, किन्तु जिस सेठ की घूस उसने अस्वीकार की थी, वह उसे अपने यहाँ ऊँचे पद पर नियुक्त करता है। वह अपने यहाँ ईमानदार और कर्तव्यपरायण कर्मचारी रखना चाहता है। इस प्रकार प्रेमचंद के संसार में सत्कर्म का फल सुखद होता है। वास्तविक जीवन में ऐसी आश्चर्यप्रद घटनाएँ कम घटती हैं।

प्रेमचंद की उपन्यास-कला का यह स्वर्ण युग था। सन् 1931 के आरम्भ में ग़बन प्रकाशित हुआ था। 16 अप्रॅल, 1931 को प्रेमचंद ने अपनी एक और महान रचना, कर्मभूमि शुरू की। यह अगस्त, 1932 में प्रकाशित हुई। प्रेमचंद के पत्रों के अनुसार सन् 1932 में ही वह अपना अन्तिम महान उपन्यास, गोदान लिखने में लग गये थे, यद्यपि 'हंस' और 'जागरण' से सम्बंधित अनेक कठिनाइयों के कारण इसका प्रकाशन जून, 1936 में ही सम्भव हो सका। अपनी अन्तिम बीमारी के दिनों में उन्होंने एक और उपन्यास, 'मंगलसूत्र', लिखना शुरू किया था, किन्तु अकाल मृत्यु के कारण यह अपूर्ण रह गया। 'ग़बन', 'कर्मभूमि' और 'गोदान'- उपन्यासत्रयी पर विश्व के किसी भी कृतिकार को गर्व हो सकता है। 'कर्मभूमि' अपनी क्रांतिकारी चेतना के कारण विशेष महत्त्वपूर्ण है। लाहौर कांग्रेस के अधिवेशन में अध्यक्ष-पद से भाषण देते हुए जवाहरलाल नेहरू ने घोषित किया था। 'मैं गणतंत्रवादी और समाजवादी हूँ।' कर्मभूमि इस अशान्त काल की प्रतिध्वनियों से भरा हुआ उपन्यास है। गोर्की के उपन्यास, 'माँ' के समान ही यह उपन्यास भी क्रान्ति की कला पर लगभग एक प्रबंध-ग्रन्थ है। यह उपन्यास अद्भुत पात्रों की एक सम्पूर्ण शृंखला प्रस्तुत करता ह। अमर कांत, समरकान्त, सक़ीना, सुखदा, पठानिन, मुन्नी। अमरकान्त और समरकान्त पाठकों को पिता और पुत्र, नेहरू-द्वय का स्मरण दिलाते हैं। मुंशी प्रेमचंद की स्मृति में भारतीय डाक विभाग की ओर से 31 जुलाई, 1980 को उनकी जन्मशती के अवसर पर 30 पैसे मूल्य का एक डाक टिकट जारी किया। गोरखपुर के जिस स्कूल में वे शिक्षक थे, वहाँ प्रेमचंद साहित्य संस्थान की स्थापना की गई है। इसके बरामदे में एक भित्तिलेख है जिसका चित्र दाहिनी ओर दिया गया है।

विशेष -

➢ भारत के उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद के युग का विस्तार सन् 1880 से 1936 तक है। यह कालखण्ड भारत के इतिहास में बहुत महत्त्व का है।

➢ प्रेमचंद का वास्तविक नाम धनपत राय श्रीवास्तव था। वे एक सफल लेखक, देशभक्त नागरिक, कुशल वक्ता, ज़िम्मेदार संपादक और संवेदनशील रचनाकार थे।

➢ प्रेमचंद का जन्म वाराणसी से लगभग चार मील दूर, लमही नाम के गाँव में 31 जुलाई, 1880 को हुआ। प्रेमचंद के पिताजी मुंशी अजायब लाल और माता आनन्दी देवी थीं।

➢ प्रेमचंद का कुल दरिद्र कायस्थों का था, जिनके पास क़रीब छः बीघे ज़मीन थी और जिनका परिवार बड़ा था। प्रेमचंद के पितामह, मुंशी गुरुसहाय लाल, पटवारी थे।

➢ प्रेमचंद ने कुल 15 उपन्यास, 300 से कुछ अधिक कहानियाँ, 3 नाटक, 10 अनुवाद, 7 बाल-पुस्तकें तथा हज़ारों पृष्ठों के लेख, सम्पादकीय, भाषण, भूमिका, पत्र आदि की रचना की है।

निष्कर्ष

प्रेमचंद की तीन जीवनीपरक पुस्तकें सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं:

प्रेमचंद घर में- १९४४ ई. में प्रकाशित यह पुस्तक प्रेमचंद की पत्नी शिवरानी देवी द्वारा लिखी गई है जिसमें उनके व्यक्तित्व के घरेलू पक्ष को उजागर किया है। २००५ ई. में प्रेमचंद के नाती प्रबोध कुमार ने इस पुस्तक तो दोबारा संशोधित करके प्रकाशित कराया।

प्रेमचंद कलम का सिपाही- १९६२ ई. में प्रकाशित प्रेमचंद के पुत्र अमृतराय द्वारा लिखी गई यह प्रेमचंद वृहद जीवनी है जिसे प्रामाणिक बनाने के लिए उन्होंने प्रेमचंद के पत्रों का बहुत उपयोग किया है।

कलम का मज़दूर:प्रेमचन्द- १९६४ ई. में प्रकाशित इस कृति की भूमिका रामविलास शर्मा के अनुसार-"29 मई, 1962" में लिखी गई थी किंतु उसका प्रकाशन बाद में किया गया था। मदन गोपाल द्वारा रचित यह जीवनी मूलतः अंग्रेजी में लिखी गई थी जिसका बाद में हिंदी रूपांतरण भी प्रकाशित हुआ। यह प्रेमचंद के परिवार के बाहर के व्यक्ति द्वारा रचित जीवनी है जो प्रेमचंद संबंधी तथ्यों का अधिक तटस्थ रूप से मूल्यांकन करती है।

प्रसाद जी के नाटकों पर अभिनेय न होने का आरोप भी लगता रहा है। आक्षेप किया जाता रहा है कि वे रंगमंच के हिसाब से नहीं लिखे गये हैं, जिसका कारण यह बताया जाता है कि इनमें काव्यतत्त्व की प्रधानता, स्वगत कथनों का विस्तार, गायन का बीच-बीच में प्रयोग तथा दृश्यों का त्रुटिपूर्ण संयोजन है। किंतु उनके अनेक नाटक सफलतापूर्वक अभिनीत हो चुके हैं। उनके नाटकों में प्राचीन वस्तुविन्यास और रसवादी भारतीय परंपरा तो है ही, साथ ही पारसी नाटक कंपनियों, बँगला तथा भारतेंदुयुगीन नाटकों एवं शेक्सपियर की नाटकीय शिल्पविधि के योग से उन्होंने नवीन मार्ग ग्रहण किया है। उनके नाटकों के आरंभ और अंत में उनका अपना मौलिक शिल्प है जो अत्यंत कलात्मक है।[67] इसके बावजूद बाबू श्यामसुंदर दास से लेकर बच्चन सिंह तक हिंदी आलोचना की तीन पीढ़ियाँ एक प्रवाद के रूप में मानती रही है कि

प्रसाद के नाटक अभिनेय नहीं हैं। परंतु नयी पीढ़ी के वैसे आलोचक जो सीधे रंगमंच से जुड़े रहे हैं, बिल्कुल भिन्न विचार प्रकट करते हैं। शांता गांधी ने 'नटरंग' त्रैमासिक में लिखा था : "प्रसाद के नाटकों की सभी समस्याओं को सुलझाकर उन्हें अत्यंत सफलतापूर्वक रंगमंच पर प्रस्तुत किया जा सकता है और उनका अवश्य ही प्रदर्शन होना चाहिए।"

इस दिशा में आगे बढ़ते हुए अनेक निर्देशकों ने प्रसाद के मुख्य नाटकों को रंगमंच पर प्रदर्शित किया तथा अनेक आलोचकों ने उनके अलग-अलग नाटकों का रंगमंचीय विमर्श भी प्रस्तुत किया है। श्री वीरेन्द्र नारायण द्वारा प्रस्तुत स्कन्दगुप्त का रंगमंचीय अध्ययन 'हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास' भाग-११ में साठ पृष्ठों में विन्यस्त है। इस दिशा में एक समेकित प्रयत्न की तरह 'नाटककार जयशंकर प्रसाद' नामक संपादित पुस्तक में सत्येन्द्र कुमार तनेजा ने प्राचीन से लेकर विभिन्न नवीन लेखकों तक के विचार उपयुक्त रंगमंचीय परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किये हैं, जिसका एक प्रमुख अंश नाट्य निर्देशकों द्वारा प्रस्तुत विचार तथा रंग-समीक्षकों द्वारा प्रस्तुत समीक्षाएँ हैं। इस दिशा में लम्बी सर्जनात्मक साधना के उपरान्त महेश आनंद ने 'जयशंकर प्रसाद: रंगदृष्टि' एवं 'जयशंकर प्रसाद : रंगसृष्टि' नामक दो खंडों की पुस्तक में प्रसाद के सभी नाटकों के विविध रंगमंचीय आयामों को उपस्थापित किया है। इसके प्रथम खंड में प्रसाद के रंग-विचारों और सभी नाटकों के विस्तृत विश्लेषण द्वारा उनकी रंगदृष्टि को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है, जबकि उनके नाटकों और अन्य रचनाओं की प्रस्तुतियों के विभिन्न पक्षों का विवेचन, निर्देशकों के वक्तव्य, प्रमुख रंगकर्मियों से साक्षात्कार, पत्राचार तथा अन्य विवरणों का 'रंगसृष्टि' नामक पुस्तक के दूसरे भाग में विस्तृत विवेचन किया गया है।

सन्दर्भ

1. *रामविलास, शर्मा (2008). प्रेमचंद और उनका युग. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. पृ॰ 17. आई॰ऍस॰बी॰ऍन॰ 978-81-267-0505-4.*
2. *रामविलास, शर्मा (2008). प्रेमचंद और उनका युग. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन. पृ॰ 18. आई॰ऍस॰बी॰ऍन॰ 978-81-267-0505-4.*
3. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995, पृष्ठ 15
4. *जयशंकर प्रसाद ग्रन्थावली*, भाग-१, संपादक- ओमप्रकाश सिंह, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण-२०११, पृष्ठ-xxxix.
5. *प्रसाद का सम्पूर्ण काव्य*, संपादन एवं भूमिका- डॉ॰ सत्यप्रकाश मिश्र, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण-२००८, पृष्ठ-१३.
6. *प्रसाद का सम्पूर्ण काव्य*, संपादन एवं भूमिका- डॉ॰ सत्यप्रकाश मिश्र, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण-२००८, पृष्ठ-२०.